Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
January-June 2024 5(1), 1255–1259

THE TRAGEDY OF DISPLACEMENT IN KASHMIR-CENTRIC HINDI NOVELS (WITH SPECIAL REFERENCE TO SHIGAF)

कश्मीर केंद्रित हिंदी उपन्यासों में विस्थापन की त्रासदी (शिगाफ़ के विशेष संदर्भ में)

Prabhakar Kumar [1] Bharat Bhushan [2]

[1] Research Scholar PhD Hindi
[2] Research Director and Head Department of Hindi and Other Indian Languages Central University of Jammu, Samba, India

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i1.2024.4167

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: Kashmir, which is called the 'heaven on earth', is called the 'heaven of India' not only because of its natural beauty but also because different castes, religions and communities live together in love and harmony. Since the history of Kashmir has been a 'history of repetitions', political instability and upheaval can be seen here from time to time. At different times in the history of Kashmir, rulers of different religions and communities ruled. Among them, many prominent people were followers of Hinduism, Buddhism and Islam.

Hindi: कश्मीर जिसे ष्पृथ्वी का स्वर्गष् कहा जाता हैए वह केवल प्रकृति.सौन्दर्य के कारण ही नहीं अपितु विभिन्न जातिए धर्मए समुदायों के परस्पर प्रेम और सौहार्द के साथ रहने के कारण कश्मीर को ष्भारत का स्वर्गष् कहा जाता है। चूंकि कश्मीर का इतिहास ष्पुनरावृत्तियों का इतिहासष् रहा है। इसीलिए समय.समय पर यहाँ राजनीतिक अस्थिरता और उथल.पुथल भी देखा जा सकता है। कश्मीर कर इतिहास में अलग अलग समय पर अलग अलग धर्म एवं समुदाय के शासकों ने शासन किया। जिनमें हिन्दूए बौद्ध और इस्लाम धर्म को मानने वाले कई प्रमुख थें।

1. प्रस्तावना

कश्मीर जिसे 'पृथ्वी का स्वर्ग' कहा जाता है, वह केवल प्रकृति-सौन्दर्य के कारण ही नहीं अपितु विभिन्न जाति, धर्म, समुदायों के परस्पर प्रेम और सौहार्द के साथ रहने के कारण कश्मीर को 'भारत का स्वर्ग' कहा जाता है। चूंकि कश्मीर का इतिहास 'पुनरावृत्तियों का इतिहास' रहा है। इसीलिए समय-समय पर यहाँ राजनीतिक अस्थिरता और उथल-पुथल भी देखा जा सकता है। कश्मीर कर इतिहास में अलग अलग समय पर अलग अलग धर्म एवं समुदाय के शासकों ने शासन किया। जिनमें हिन्दू, बौद्ध और इस्लाम धर्म को मानने वाले कई प्रमुख थें।

कश्मीर में कश्मीरी हिंदुओं या पंडितों का विस्थापन कई बार हुआ था। जहां प्रो० कमलनयन भान ने अपनी पुस्तक 'पैराडाइज लॉस्ट: सेवन एक्सोडस ऑफ कश्मीरी पंडित्स' में 7 नरसंहार का जिक्र करते हैं।

इसीलिए उन्होंने इस पुस्तक को 7 अध्यायों में विभाजित किया है। इसमें उन्होंने इस्लाम के आगमन के पश्चात का हिंदुओं के पलायन, विस्थापन और नरसंहार को रेखांकित किया है। वहीं अशोक पांडेय ने भी अपनी पुस्तक 'कश्मीर और कश्मीरी पंडित' में कश्मीर में हिंदुओं/पंडितों के उद्भव के साथ-साथ ऐतिहासिक विकास को भी रेखांकित किया है। उन्होंने हिन्दू शासन काल में हुए हिंदुओं के पलायन के कारणों की पड़ताल की है। उन्होंने

बताया है कि राजदेव (1212-1235 ई०) के शासन काल में कुछ ऐसे भट्ट ब्राह्मणों ने राजनीतिक षड्यन्त्र के कारण राज्य से निष्कासन के शिकार हुए जिन्होनें राजदेव को राजगद्दी पर बैठने में सहायता की थी।

इसके पश्चात इस्लाम के शासन के काल में कई बार कश्मीरी हिंदुओं का पलायन और नरसंहार हुआ जिसके केन्द्र में इस्लामिक आतंकवाद या जेहाद था। स्वतंत्र भारत में भारत-पाक युद्ध और 1989 में कश्मीरी हिंदुओं का विस्थापन भारत के इतिहास का एक संवेदनशील और जटिल विषय है। यह समस्या मुख्य रूप से 1989-90 के दौरान कश्मीर घाटी में कट्टरपंथी उग्रवाद और आतंकवाद के बढ़ने के कारण उत्पन्न हुई, जब हजारों कश्मीरी हिंदुओं (मुख्यतः कश्मीरी पंडित समुदाय) को घाटी छोड़कर देश के विभिन्न हिस्सों में शरण लेने के लिए मजबूर होना पड़ा। विस्थापित कश्मीरी हिंदुओं को न केवल अपनी संपत्ति और घर छोड़ने पड़े, बल्कि उनकी संस्कृति, पहचान और सामाजिक संरचना को भी गहरी चोट पहुंची। उनके पुनर्वास और इस समस्या का समाधान आज भी एक बड़ी चुनौती है। कश्मीरी हिंदुओं के विस्थापन में चुनौतियाँ और समाधान की बात करें तो उनके सामने आतंकवाद का खतरा (इस्लामिक आतंकवाद), पुनर्वास की समस्या, भरोसे की कमी, राजनीतिक और धार्मिक मुद्दे, स्थानीय समर्थन के अभाव की कमी प्रमुख चुनौतियाँ हैं। इन समस्याओं के समाधान की बात करें तो सुरक्षा की गारंटी, आर्थिक पुनर्वास, सांस्कृतिक पुनर्निर्माण, सामाजिक समावेशन का संकट को दूर करके तथा पुनर्वास से ही संभव है।

कश्मीरी हिंदुओं जिसके लिए कश्मीर पंडित शब्द रुढ़ हो गया था। उनका सन् 19 जनवरी 1989 का विस्थापन, विस्थापन ही नहीं अपितु नरसंहार था इसीलिए कई इतिहासकारों ने इस परिघटना को नरसंहार कहा है। इस घटना ने पूरे कश्मीर के परिदृश्य को ही बदल डाला। जिससे कश्मीर की कश्मीरियत का सोता सूखता गया। इस दौरान कश्मीर से सात लाख कश्मीरी हिन्दू विस्थापित होकर दर-बदर भटकने के लिए मजबूर हो गए। वे अब भारत और अन्य देशों के शिविरों (कैंपों) में अपमानित और शोषित होकर गरीबी-लाचारी व जिल्लत की जिंदगी जीने और भोगने के लिए विवश हैं। विरासत और सियासत की इस दौड़ में पूर्व में केंद्र और राज्य सरकार की तटस्थ और उदासीन नीतियों ने उनके ज़ख्मों को कूदेरने का काम किया है। कवि कृष्ण कुमार कौल ने अपनी पंक्तियों के माध्यम से इस दर्द की टीस को बहुत ही संवेदनात्मक ढ़ंग से अभिव्यक्त किया हैं वह लिखते हैं कि-

"मुझसे मिलने के लिए/किसी को खटकाना नहीं होगा दरवाजा
केवल फटेहाल सरकारी तंबू/का पर्दा सरकाना होगा।"

कश्मीर केंद्रित हिंदी उपन्यासों में विस्थापन की त्रासदी (शिगाफ़ के संदर्भ में) विषय के केंद्र में विस्थापन, कश्मीर और हिंदी उपन्यास प्रमुख पारिभाषिक शब्द हैं। इसीलिए इसीलिए इस विषय को जानने और समझने हेतु विस्थापन को जानना आवश्यक है। किसी व्यक्ति या समुदाय का अपने मूल निवास स्थान से जबरन किसी अन्य स्थान पर हटाया जाना विस्थापन है। इसके लिए अंग्रेजी में Displacement शब्द का प्रयोग किया जाता है। पलायन, निर्वासन, प्रवास इत्यादि इसके पर्याय हैं। 'हिन्दी शब्दकोश' के अनुसार 'विस्थापन' शब्द अलग-अलग विषयों में भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। 'भौतिकी के क्षेत्र में एक बिंदु से दूसरे बिंदु के बीच की दूरी को विस्थापन कहा जाता है। साहित्य और सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में 'विस्थापन' का अर्थ लोगों का अपनी जमीन से कटने या उखड़ने से सम्बद्ध है।'

निष्कर्षतः विस्थापन बहुआयामी और बहुअर्थी शब्द है जिसके लिए पलायन, निर्वासन, प्रवास, विस्थापन, प्रवजन, प्रवासन, बेदखली, उन्मूलन, निष्कासन, देश निकाला, उच्चाटन, अजनबीपन, अलगाव, हटाना इत्यादि शब्द प्रयुक्त होते हैं। यह कमोबेश विस्थापन के अल्प अर्थ को ही प्रकट करते हैं।

अंचला पांडेय ने साहित्य में विस्थापन के महत्व को बताते हुए अपनी पुस्तक 'विस्थापन का साहित्यिक विमर्श' में इसका आशय 'अपने मूल से कटना और मौलिक स्थान से हटना' बताया है। उनके अनुसार है विस्थापन कभी परिस्थितिजन्य तो कभी आवश्यकताजन्य होता है। कभी यह समस्या बलात् उत्पन्न की जाती है तो कभी हमें इसे स्वेच्छा से स्वीकार कर लेना पड़ता है। कभी विवशता का परिचायक होता है तो कभी बेहतर जीवन जीने के लिए यह अभियान के रूप में।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विस्थापन मूलतः दो प्रकार के होते हैं-स्वैच्छिक विस्थापन और अनैच्छिक विस्थापन। हाँ! हम विस्थापन के प्राकृतिक, भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीति और सांस्कृतिक कारण हो सकते हैं। जहाँ भारत में विस्थापन रोजगार की तलाश, भारत-पाक विभाजन, विभिन्न आक्रमणों के दौरान, धर्म सम्प्रदाय, आतंक, विभिन्न सरकारी नीतियां-योजनाओं के कारण अनवरत रूप से जारी है। वहीं वैश्विक स्तर पर यूगोस्लाविया का विघटन, क्रोएशिया संघर्ष, वियतनाम कम्बोडिया संघर्ष, इजराइल-अरब संघर्ष, इराक-ईरान संघर्ष और वर्तमान में जारी रूस-यूक्रेन का संघर्ष। इन सभी ने युद्ध की स्थिति को जन्म दिया है जा व्यापक भारत एवं वैश्विक स्तर पर लोगों को विस्थापित होने के लिए विवश किया है।

विस्थापन अनवरत चलने वाली परिघटना है जिसका सम्बन्ध मूलतः अपने समाज और संस्कृति से जुड़ा होता है। हर समय और समाज में विस्थापन के अलग-अलग कारण होते हैं। कश्मीर का विस्थापन भी मुख्यतः धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक रहा है। इसीलिए कश्मीर के विस्थापन को समझने के लिए हमें वहां के समाज और संस्कृति को जानना आवश्यक है। अभी हाल ही में जम्मू-कश्मीर में घटित अलगाववादियों द्वारा हिन्दू परिवारों की निर्मम हत्या इसकी विकट स्थिति को बयां करता है।

कश्मीर केंद्रित हिंदी उपन्यासों में विस्थापन की त्रासदी (शिगाफ़ के संदर्भ में) विषय को केंद्र में रखकर लिखे गए हिन्दी उपन्यासों में चंद्रकांता के 'ऐलान गली ज़िन्दा है', 'यहाँ वितस्ता बहती है' व 'कथा सतीसर', पद्मा सचदेव का 'नौशीन', क्षमाकौल का 'दर्दपुर', मूर्तिभंजन और 'निक्की तवी पर रिहर्सल', मीराकांत का 'एक कोई था कहीं नहीं-सा', संजनाकौल का 'पाषाणयुग', मनीषा कुलश्रेष्ठ का 'शिगाफ़' डॉ० रश्मि का 'घाटी', मधु काँकरिया

का 'सूखते चिनार', आरिफ़ एविस का 'नाकाबंदी', सूर्यनाथ सिंह का 'चलती चाकी', उपेन्द्रनाथ अश्क का 'पत्थर अल-पत्थर', जयश्री रॉय का 'इकबाल' इत्यादि प्रमुख हैं।

21वीं सदी में जिन कथाकारों एवं विद्वानों ने हिन्दी उपन्यास लेखन में अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है उसमें मनीषा कुलश्रेष्ठ का नाम उल्लेखनीय है। "विविध वैविध्य सरोकारों की बहुआयामिता, चिंतन की बारीकियां, वैश्विक भावभूमि से परिचय, बदलते सामाज का ज्ञान और भाषा का सर्जनात्मक प्रयोग कुछ ऐसी विशेषताएं है, जिसके कारण लेखिका मनीषा कुलश्रेष्ठ ने पाठकों और आलोचकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है।"

'शिगाफ' का पर्याय है- दरार। एक ऐसी दरार जो किंही दो अवयवों को अलग करती है। वह चाहे जाति, धर्म, संप्रदाय, देश के नाम पर हो या खून के नाम पर। 'शिगाफ' ब्लॉग शैली में मनीषा कुलश्रेष्ठ द्वारा लिखा गया एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें कई संवेदनाएं मिलकर एक हो गई है। इस उपन्यास में पीड़ा भोगे हुए हजारों लोगों के जीवन एवं उनसे जुड़े सपनों के आतंक, दहशत एवं खौफ़ से भर जाने का वर्णन मिलता है। इसमें लेखिका ने अमिता के ब्लॉग 'ला माँचा की राह पर, 'वापसी, 'चिनार की दो पत्तियां, 'वॉर विद इन' या वॉर विद हैल्ड, 'यास्मीन की डायरी, 'मानवबम जुलेखा का मिथकीय कोलाज, अलगाववादी नेता वसीम के आत्मालाप के जरिए कश्मीर और कश्मीरियत की करुण कथा को अलग-अलग दृष्टिकोण व आयाम से नई शैली में प्रस्तुत किया गया है। यह कश्मीर से विस्थापित लाखों कश्मीरियों की पीड़ा तथा वहाँ पर जीवन व्यतीत कर रहे हजारों लोगों के पीड़ा, दर्द, कसक, घुटन और छटपटाहट की वास्तविक तस्वीर को अभिव्यक्त करता है।

'शिगाफ़' उपन्यास में जो विस्थापन के कारण कश्मीरियों को पीड़ा भोगने के लिए विवश करती है। उन का यह विस्थापन उन्हें केवल समजौर संस्कृति से ही दूर नहीं करता अपितु वह उन्हें कहीं पर भी बस्ने नहीं देता। वह जहां भी बस्ने का प्रयास करते हैं वहाँ वह जाम नहीं पाते। इस संदर्भ में मनीषा कुलश्रेष्ठ लिखती है कि "विस्थापन का दर्द महज एक सांस्कृतिक, सामाजिक विरासत से कट जाने का दर्द नहीं है बल्कि अपनी खुली जड़े लिए भटकने और कहीं जम न पाने की भीषण विवशता भी है, जिसे अपने निर्वासन के दौरान सेन सबेस्टियन (स्पेन) में रह रही अमिता लगातार अपने ब्लॉग में लिखती रही है। डॉन किहोते की 'रोड टु ला मांचा' से कश्मीर वादी में लौटने की अमिता की भटकावों तथा असमंजस भरी इस यात्रा को अद्भुत तरीके से समेटता हुआ यह उपन्यास विस्थापन और आतंकवाद की कोई व्याख्या या समाधान नहीं प्रस्तुत करता वरन् आस्था-अनास्था की बर्बर लड़ाइयों के बीच कुचले जाने से रह गए कुछ जीवट पलों को जिलाता है और जमीन पर गिर पड़े उस दिशा संकेतक बोर्ड को उठाकर फिर-फिर गाड़ता है जिस पर लिखा है। शिगाफ यानि एक दरार जो कश्मीरियत की रुह में स्थायी तौर पर पड़ गई है।"

उपन्यास की नायिका अमिता कश्मीर से विस्थापित है। वह तीन वर्षों से स्पेन में रह रही है। उसके संस्मरण में, उसकी चेतना में बचपनवाला घर ही जिंदा रहता है, वह कोशिश करने के बावजूद भी उसे भूला नहीं पाती है। स्पेन में अमिता की मुलाकात इयान बांड से होती है, वह अमिता को फ्रेंको की तौनाशाही जीवन-मूल्यों में आई गिरावट, स्पेन का युद्ध, बास्क संघर्ष आदि अनेक किस्से, घटनाएं सुनाकर उसे 'भोगे हुआ सच' के बारे में लिखने के लिए प्रोत्साहित करता है। जिस प्रकार बास्क संघर्ष का हल निकाला जा सका है, वैसे ही कश्मीरी मसला भी सुलझाया जा सकता है। जिस प्रकार से कश्मीर की बात आते ही यहां उलझन ही उलझन में दुबारा फंसते हुए मुद्दे नजर आते है- "हमारे यहां हल निकालना इतना आसान नहीं है- कश्मीर में हम तीन तरह के कश्मीरी है। कश्मीरी हिंदू, कश्मीरी सुन्नी और कश्मीरी शिया, सूफी और खानाबदोशों की बात अलग से की- फिर लेह बौद्ध बहुल और जम्मू हिंदू बहुल है। यहां धार्मिक पहचान ज्यादा बड़ा मसला है। हल बेहद मुश्किल।"

अमिता अपने ब्लॉग में लिखती है, उसके प्रति उत्तर में डा.वाइ.एन. रैना कहती है कि- "कश्मीरीयों को तो चारों तरफ से मार पड़ी है। पाकिस्तान से, भारत के उदासीन नीतियां से, फिर फौजी घेरा.... एनकॉउंटर... ब्युरोक्रसी। अब यह तो तय है... जहाँ एक तरफ वह भारतीय सुरक्षा बलों से खुश नहीं है तो वहीं दूसरी तरफ दहशतगर्दों से भी तंग आ चुका है। वह मुजफ्फराबाद के हालात देख पाकिस्तान से भी खौफ खाना उनकी मजबूरी है। सच्चाहत (टुरिज्म) का जो बहुत बड़ा कारोबार है कश्मीर का.... वही उसकी जान को लगा कीड़ा है।"

मुजहब हसनैन जो मूलतः कश्मीर का है अब लंदन में रहता है ब्लॉग पर टिप्पणी करता है... "मैं दो साल पहले कश्मीर लौटा था, मगर वहां जाकर लगा कि मैं भगोड़ा हूं। लोगों ने, मिलिट्री ने, सभी ने मुझे शक की नजर से देखा है। मैं वापस यहां आया और यहीं बस गया। अब मैं कश्मीर के बारे में पढ़ने से बचता हूं, मैं अपनी पहचान से बचता हूं वे सारी चीज जिनसे मैं बना हूं, उन्हें मैं नकारता हूं मगर मैं उस दुःख का क्या करूं, जो मैं अपने साथ ले आया हूं?"

कश्मीर समस्या अर्थात 'के इश्यु' पर अमिता का ब्लॉग अलग-अलग विचारों को प्रस्तुत करता है- 'कश्मीर की असली समस्या क्या है?' फिर भी समझ नहीं आता है। विस्थापन से पीड़ित अमिता अपने दर्द को बयान करती हुई दिखायी देती है। कश्मीर को लेकर लेखिका ने अपनी वेदना और दुःख व्यक्त किया है। "मैं आज निर्वासित हूं.... क्योंकि तुमने चुना था निहत्थों को मारना। मैं आज निर्वासित हूं... मैंने चुना सम्मान से जीना.... हथियार न उठाना। मैं आज निर्वासित हूं... क्योंकि पूरा संसार चुप रहा... महज कुछ लोग ही तो मर रहे थे।"

इस उपन्यासों में तमाम बिंदुओं को सामने रखकर कश्मीरी समस्याओं को हल करने की विशेषता रही है। आज जो भी कश्मीर में हो रहा है वह उचित नहीं है "मैं आज निर्वासित हूं... क्योंकि मेरा भारतीय होने में विश्वास था।" "यकीन है कि हमारा कल्वर, जिन्हें हम कश्मीरियत कहते हैं, वह इतनी कमजोर नहीं है कि कट्टरपंथी इसे कुचल दें। तुम लोग लौटोगे तो वक्त के बीतने के साथ इसकी चमक लौट आएगी। और यह फिर अमन और भाईचारे से गुजार होगी।"

निरंजन रैना अमिता से ब्लॉग पर संवाद करते हुए लिखता है कि कश्मीरी पंडित के विस्थापन के दर्द को बताते हुए लिखा है कि केपी अपनी जड़ों से कट गए हैं। यह उनका कटना केवल स्थानिक नहीं है अपितु मानसिक और सांस्कृतिक हैं जिसे वे भोगने के लिए विवश हैं। इसीलिए वे अपनी स्थिति

पर अवसादग्रस्त हैं। इसीलिए इस संदर्भ में लेखिका लिखती है कि "मैं उतने अच्छे हाल में नहीं हूँ। जड़ें मेरी भी नहीं बची हैं। अगर थोड़ी-बहुत बची हैं, तो वो खुली हैं... फूटे छाले की तरह और छाले सबसे भीतर हैं। फोड़कर क्या फायदा! नहीं, मैं छालों की बात कतई नहीं करूँगी आज रात। मैं बहुत घने अवसाद में फँस जाऊँगी। मैं स्मृतियों के प्रवाह में लम्बे समय से बहते हुए थक चुकी हूँ। मैं स्मृतिविहीन, जड़ वस्तु की तरह जीना चाहती हूँ। इन दीवारों की तरह या उन नकली फूलों की तरह।"

उपन्यास में धर्म, जाति, संस्कृति और आवाम की पीड़ा दर्शायी गयी है। विचारधाराओं और मनुष्य के गहराते दर्द को लिखा है, शायद उनकी रुह तक कांप उठी थी। वह भयानक वक्त को अंकित किया है। अनेक कहानियाँ जो जुड़ती चली गई है। लेखिका विस्थापितों स्त्रियों की दशा को किस प्रकार प्रभावित करता है उसको भी रेखांकित है।

वह औरतों के दर्द को बखूबी दर्शाया है। वह लिखती हैं कि "युद्ध, सियासी दांव पेच, छद्म युद्ध और आतंकवाद से कोई वास्ता नहीं है।" अमिता अपने ब्लॉग में बताती है कि "कश्मीर की स्थिति यह है कि 'सात औरों में एक कमाने वाला मर्द आता है। आए दिन जान की आफत् । महंगाई इतनी कि बस.... नौकरी नहीं मिलती। उस पर पहरेदारी अलग से और डर... ऐसा कि औरतें सोए बिना महीनों से रह रही है कि आँख सुर्ख हो जाती है मगर नींद तुम।"

भारतीय परंपरा में औरत को श्रृंगार का पर्याय माना जाता है, लेकिन कश्मीरी समाज की औरतों का जीवन तालिबानी फतवों के बीच गुजर रहा है। सर से पांव तक अपने आप को ढंककर रख है। फैशन, सौदर्य और उसके प्रसाधनों से उसे कोसों दूर कर दिया गया है। आधुनिक युग में जहां नारी ने आसमान छू लिया है तो वहीं दूसरी ओर उनका जीवन नारकीय एवं एक महज खिलौना बन के रह गई है। इसीलिए मनीषा कुलश्रेष्ठ लिखती हैं कि- "देखिए न, मजलूम और पिछड़े परिवारों की नाबालिग लड़कियां थी.... कितनी अजीब बात थी कि जिस हालात में वे बड़ी हुई हैं.... उन्होंने पिक्चर हॉल का मुंह तक न देखा होगा.... महिलाओं की फैशनेबल किताबें उन्होंने छुई तक न होगी... और बिना पार्लर जाए भी वे इस किस्म के स्कैंडल में जा उलझी थीं। वह ब्यूरोक्रेसी का सड़ा हुआ चेहरा था जिसने नौकरी का लालच देकर उन मजलूम लड़कियों को जाल में फंसाया था... वह भी चाय सैंडविच मिलाकर"

उपन्यास में लेखिका ने सारी घटनाओं को तारीख के साथ दिया है जो उस घटना कि वास्तविकता को दर्शाती है। उन्होंने खास समुदाय के द्वारा मानवाधिकार के माँ पर हो रहे षड्यन्त्र को द्वारा 'कश्मीर में एथानिक क्लीजिंग के पैरोकार बताया है। वह लिखती हैं कि 'कश्मीर में एथानिक क्लीजिंग के पैरोकार यही थे जो आज उपवास रख रहे हैं। हिटलर मानो गांधी का चोला पहनकर आ गया हो। ये आज कहते हैं कि 'कश्मीर मुसलमान कभी नहीं वह आदेश जो मस्जिदों के इमामों ने जारी किए थे, 19 जनवरी, 1989 को।"

उपन्यास में विस्थापितों की दास्तां है, अपनी ही जड़ से उखड़ जाने की पीड़ा व्यक्त हुई है। आधुनिक तकनीकी का अच्छा प्रयोग करके लेखिका ने दर्द को बयां किया है। आज तक कश्मीर मसले का कोई मुकम्मल हल नहीं निकला है। कश्मीरियों की एक महागाथा है। कश्मीर विस्थापितों की सबसे बड़ी समस्या भी यही रही है। वह न चाहकर भी अपने अतीत में उलझा हुआ है। विस्थापन, धर्मनिरपेक्ष और सांस्कृतिक आदि सभी समस्याओं और दर्द का खुलासा है।

कश्मीरी विस्थापितों की समस्या का एक बिन्दु यह भी है कि उनके विस्थापन के बाद उनके पास वोट बैंक नहीं रहा है इसीलिए उनके मसले को कभी भी गम्भीरता से नहीं लिया। कश्मीरी हिंदुओं ने संपदायिक दंगों और आतंकवाद के खिलाफ हथियार न उठाकर कलम उठाना ज्यादा बेहतर समझ इसीलिए वे विस्थापन को चुना न कि आतंकवाद को। "जितना शोर राजनेताओं और बुद्धिजीवियों ने गोधराकांड के शिकार कुछ सौ लोगों के लिए मचाया है, उसका आधा भी कश्मीर में मारे गए हज़ारों हिन्दुओं के लिए मचाया गया होता तो... लगता कि हम भी अपने देश के अपने हैं। विस्थापितों की पीड़ा का तो मैं यहाँ जिक्र करता ही नहीं, उन्हें तो जाने दो। सच पूछो तो हम देश की लिजलिजी नीतियों के मारे हुए हैं। इसीलिए कश्मीरी पंडित, किसी राजनीतिक पार्टी पर भरोसा नहीं कर पाता।"

यह जो सरकार पर भरोसा न कर पाना पूर्व की सरकारों की कश्मीर में असफलता को दिखाता है। वर्तमान एनडीए सरकार ने कश्मीरी विस्थापितों को ध्यान में रखते हुए उनके लिए ऑनलाइन पोर्टल शुरू कर पंजीकरण का कार्य शुरू कर किया है। भविष्य में संभावनाएँ हैं कि कश्मीरी हिंदुओं को अपना घर वापस मिले।

कश्मीर में पहले जहां प्रेम और सौहार्द का माहौल था कश्मीर में विदेशी आक्रान्ताओं के आगमन के बाद पूरी तरह से तहस-नहस कर दिया है। इसीलिए जो कश्मीर कश्मीरियत जिसे सांझी सांकृति कहते थे। वह टूट गई है इसीलिए अब हिन्दू और मुस्लिमों के बीच दरार आ गई है कैफ़ी आज़मी साहब इसी दरार को भरने की बात करते है। कश्मीर का मसला बहुत जटिल और पेचीदा मसला है जिसके समाधान के लिए लोगों को खास तौर से दोनों कौमों के लोगों को मिलकर हल करने की पहल करने की आवश्यकता है। इसीलिए कवि कैफ़ी आज़मी ने लिखते हैं कि-

"एक पत्थर से तराशी थी जो तुमने दीवार/एक ख़तरनाक शिगाफ़ उसमें नज़र आता है

देखते हो तो सुलह की तदबीर करो/अहद पेचीदा मसाइल हैं

उनको सुलझाओ सहीफ़/कोई तहरीर करो।"

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि शिगाफ़ उपन्यास विस्थापन भोगते कश्मीरियों की उस पीड़ा, व्यथा, दर्द को आवाज देता है, जिसने कश्मीर की कश्मीरियत को छीन लिया गया है। उनकी कई अनसुनी आवाजें, अनकही पीड़ा, छटपटाहट, बेचैनी, आदि के ये साक्षी रहे हैं। कश्मीरियों के विस्थापन

की अवधि बहुत लंबी रही है। यहाँ आतंक की पकड़ इतनी मजबूत हो गई है कि उनकी रिहाई की तमाम कोशिशें नाकाम होती जा रही है। लेकिन उम्मीद सबसे बड़ी ताकत और हौसला सबसे बड़ा हथियार है। इस उपन्यास में यह आशा अलगाववादी नेता वसीम कयुम खान के माध्यम से व्यक्त की गयी है कि अब कश्मीर की आमजनता भी पाकिस्तान समर्थित मिलिटेन्ट की 'आजाद कश्मीर' की मंशा को समझ रही है और उसे स्वीकारने के इए तैयार नहीं है। एक दिन विस्थापन की यह बेड़ियाँ जरूर टूटेंगी और विस्थापित हिन्दुओं को पुनः अपनी मातृभूमि पर प्रेम और सौहार्द से रहने का मौका मिलेगा। इन उपन्यासों में यही आशा और उम्मीद दिखायी पड़ती है।

संदर्भ सूची

कश्मीर: इतिहास और संस्कृति: कुसुम दत्ता भूरिया व ऋषन भारद्वाज ऋषभ; प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली; संस्करण: पृष्ठसंख्या: 25

कमलनयन भान: पैराडाइज लॉस्ट: सेवन एक्सोडस ऑफ कश्मीरी पंडित्स'; संस्करण: 2003; भूमिका से पृष्ठसंख्या: 1

कश्मीर और कश्मीरी पंडित: अशोक पांडेय; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली; संस्करण: पृष्ठसंख्या: 28

भारतीय साहित्य में कश्मीर: प्रो० कृपाशंकर चौबे (समन्वयक संपा०); बहुवचन: त्रैमासिक पत्रिका अंक: 64-65-66; लेख: कश्मीर केंद्रित उपन्यासों में निर्वासन की त्रासदी; पृष्ठसंख्या: 351

प्रधान संपादक शंभुनाथ: हिंदी साहित्य ज्ञानकोश खंड -7, भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता; वाणी प्रकाशन, दिल्ली; पृ.: 3847

अंचला पाण्डेय: विस्थापन का साहित्यिक विमर्श; लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली; संस्करण: पृष्ठसंख्या: 11

लमही: प्रधान संपादक: विजय राय (संपादकीय); अंक: जनवरी-मार्च: 2013; पृ. 5

शिगाफ़: मनीषा कुलश्रेष्ठ; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली; प्रथम संस्करण: 2012 कवर पेज टिप्पणी

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ. 38

शिगाफ : मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ. 24

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ. 60

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ.29

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ-57

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ-23

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ. 79

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ. 134

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ. 71

शिगाफ: मनीषा कुलश्रेष्ठ; पृ. 72

शिगाफ़: मनीषा कुलश्रेष्ठ; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली; प्रथम संस्करण: 2012 कवर पेज से